International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(5): 74-76

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(5): 74-76
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 17-07-2016
Accepted: 18-08-2016

शक्ति पाण्डेय
शोध छात्रा (संस्कृत)
म0गाँ0 चि0 ग्रामोदय
विश्वविद्यालय सतना, म0प्र0 भारत

Correspondence
शक्ति पाण्डेय
शोध छात्रा (संस्कृत)
म0गाँ0 चि0 ग्रामोदय
विश्वविद्यालय सतना, म0प्र0 भारत

भारत में नारीवाद

शक्ति पाण्डेय

सारांश
यह लेख भारतीय संस्कृति में नारीवाद के समृद्ध इतिहास का एक अमूल्य सिंहावलोकन है। यहाँ प्राचीन भारतीय संस्कृति में नारीवादी उच्च विचारधाराओं के सिद्धांतों का विशद् वर्णन है। लेख के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है, कि कैसे प्राचीन काल में दैवीय रुप में प्रतिष्ठित नारी का स्वरुप मध्यकाल में कुरीतियों सें धूमिल होकर वर्तमान में संघर्षरत है। आज भारतीय नारीवाद का उद्घोष प्राचीन संस्कृति की ओर लौटो है, न कि रेडिकल विचारधारा है।

संकेतशब्द: नारीवाद, भारतीय संस्कृत वाङमय में महिला का स्थान, भारत में स्त्री विमर्श

प्रस्तावना
सम्पूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति प्राचीनतम मानी जाती है। इस संस्कृति का उदय मूलतः वेद के मंत्रों से हुआ है। वैदिक युग में स्त्री और पुरूष दोनों का समानान्तर वर्णन मिलता है, एक ओर विष्णु तो दूसरी ओर लक्ष्मी हैं, एक ओर रूद्र शिव हैं, तो दूसरी ओर पार्वती हैं। एक ओर देव सेनानायक इंद्र हैं, तो दूसरी तरफ उनकी पत्नी सची हैं। ऋग्वेद के समस्त देवता पत्नी और पुत्र, पुत्री वाले हैं। वैदिक युग का उद्भव अभी तक विद्वानों की खोज का विषय बना है, फिर भी तिलक महोदय के ''वसंत सम्पात सिद्धांत'' से यह सिद्ध हो जाता है, कि ईसा से पैंसठ सौ वर्ष पूर्व भी ऋग्वेद की ऋचाएं विद्यमान थीं। इतने प्राचीन काल में नारी का महिमा मण्डन केवल भारत वर्ष में ही उपलब्ध होता है।
भारतीय संस्कृति में नारी के अनेक पर्याय हैं, जो उसकी विभिन्न भूमिकाओं पर आधारित है। वह 'जाया' कही जाती हैं क्योंकि अपने गर्भ से अपने पति को पुत्र के रूप में उत्पन्न करती है। ''नारी का दूसरा नाम ''भार्या'' भी है, क्योंकि वह सम्पूर्ण परिवार का भरण–पोषण करती है। उसका तीसरा नाम 'गृहणी' है, क्योंकि पत्नी के होने से घर को घर कहा जाता है। 'ऋग्वेद' में कहा गया कि वस्तुतः पत्नी ही घर है। (जाया इद अस्तम (ऋ 3–5, 3–4) 'अथर्ववेद' में ''एवा त्वं समज्ञयेधि पत्युरस्त परेत्य'' पत्नी को पति के घर की साम्राज्ञी माना गया है। वह पति के घर दासी नहीं है। पति की दृष्टि से ही नहीं परिवार में सास ससुर नंद सभी की दृष्टि में वह साम्राज्ञी है। (ऋ–10–85–46)। इसी प्रकार नारी के पचासों पर्याय हैं, जो उसकी विभिन्न दशाओं को सूचित करते हैं। जैसे–कामिनी, माननी, रमणी, गृहणी इत्यादि। 'अल्टेकर' के अनुसार ''ब्रह्मवादिनी'' नामक स्त्रियों का वर्ग जीवन पर्यन्त अध्यनरत रहता था। इस युग में महिला समृद्धि की देवी स्वीकार की गयी है।[1]
वैदिक युग में ही नारी की प्रतिष्ठा भारत में शक्ति के रूप में हो चुकी थी, शक्ति के होने से ही कोई भी चेतन एवं अचेतन वस्तु शक्तिमान बनती है। पारस पत्थर यद्यपि अचेतन है परन्तु अपने स्पर्श शक्ति के कारण वह लोहे को सोना बना देता है। अचेतन प्राणियों में यह शक्ति अधिक मुखर और प्रकट होती है। भगवान शिव के विषय में शंकराचार्य यही कहते हैं कि शिव से 'इ' को पृथक कर दिया जाये तो वह शव मात्र रह जाता है।
आगे चलकर जब यज्ञों का प्रारम्भ हुआ और यज्ञ को लक्ष्मी एवं विष्णु का समन्वित रूप माना गया तब भी नारी की महिमा को हमारे ऋषियों ने स्वीकार किया। 'शतपथ ब्राह्मण' में तो यहाँ तक कहा गया कि ''आयज्ञियों वा एषऽपतनीकः'' (शपपथ ब्राह्मण (50/06/10)– अर्थात जो पत्नी विहीन है, उसे यज्ञ करने का अधिकार नहीं है। इस कथन का यही अभिप्राय है कि अकेले पुरूष के यज्ञ करने से मात्र विष्णु का पूजन होता है, लक्ष्मी का नहीं। इसलिए लक्ष्मी की प्रसन्नता के लिए यज्ञ में नारी का रहना अनिवार्य है।
आज भारत वर्ष में नारी विमर्श के नाम पर बेसिर पैर की बातें की जा रही है। ये बातें प्रायः वही कह रहे हैं जिन्हें संस्कृत का ज्ञान नहीं है। प्राचीन भारतीय परंपरा का निर्देश है–''जाया पत्र्योन विभागो` विद्यते'' अर्थात पति–पत्नी एक ही है

और यदि पति–पत्नी एक ही हैं तो बराबरी का दर्जा देने न देने का प्रश्न ही नहीं उठता। शास्त्रों में एक का प्रभुत्व दूसरे की हीनता दृष्टिगोचर नहीं होती। सत्य कहा है कि भारतवर्ष में नारी का सामाजिक स्वरूप अत्यन्त महिमामय रहा है। विष्णुः हारीत, वृद्धहारीत, नारद, परासर तथा अन्यान्य सभी स्मृतियों में नारी के अधिकारों की खुल कर चर्चा की गयी है। 'वृद्धहारित' में तो यहाँ तक कहा गया है कि पिता कुमारी कन्या का विवाह किये बिना मर जाता है, तो उसके भाइयों का यह कर्त्तव्य है, कि वे उसके उचित वर की व्यवस्था करें। भाइयों के अभाव में गोत्र के लोग, अन्ततः राजा का यह दायित्व है कि वह कुमारी कन्या का संस्कार सम्पन्न करें। नारियों के प्रति असीम करूणा सहानुभूति तथा पक्षपात सभी स्मृतिकारों ने प्रदर्शित किया है। 'वसिष्ठ स्मृति' में तो यहां तक कहा गया है कि–यदि कोई कन्या बलात् अपहरण कर ली गयी हो, बलात भोगी हो या अन्य किन्हीं कारणों से परिवार से च्युत हो गई हो तो माता पिता एवं समाज का कर्त्तव्य है, कि वह उसका शास्त्रीय विधि से पाणिग्रहण संस्कार करे क्योंकि इन सारी स्थितियों में होने पर भी कन्या सर्वथा निर्दोष होती है, जैसे– वर्षा ऋतु में पानी का बहाव नदी के सारे कूड़े कचरे को बहा ले जाता है उसीप्रकार प्रत्येक ऋतु धर्म कन्या को कौमार्य तक पहुंचा देता है, और वह भोग के दोष से मुक्त हो जाती है। इससे अधिक उदार दृष्टि नारी के प्रति और क्या हो सकती है। स्मृतियों में स्त्री धन इत्यादि का भी विधान किया गया है, और किसी भी स्थिति में नारी को असहाय और एकांकिनी न छोड़ने की बात की गई है।

भारतवर्ष में नारियां प्रारम्भ से ही पुरूषों के समानान्तर समाज में अग्रसर थीं। विद्या के क्षेत्र में जहाँ ब्रहम्वादिनी अपाला घोषा, गार्गी, मैत्रेयी, विश्ववरा जैसी विदुषी नारियों का उल्लेख मिलता है, वहीं शौर्य पराक्रम के क्षेत्र में विषपला की भी कथा मिलती है। बारहवीं शताब्दी में मुहम्मद गोरी के आक्रमण के बाद जब तुर्कों ने भारत में अपना स्थायी निवास बना लिया तब भारतीय संस्कृति में एक युगान्तर आ गया। क्योंकि तुर्कों की संस्कृति भारतीय संस्कृति की पूर्णतया विरोधिनी थी। मुस्लिमों द्वारा लड़कियो को निरन्तर पर्दे में रखना, उन्हें भोग मात्र की वस्तु समझना तथा पुरूषोचित अधिकारों से उन्हें वंचित रखना ये कुछ ऐसे मुद्दे थे जो भारतीय समाज में घुल मिल गये। चूंकि तुर्क बहुत बड़ी संख्या में भारत आये, उन्हें अपने भोग के लिए नारियों की आवश्यकता थी। इसलिए उनकी कुदृष्टि भारतीय कन्याओं पर पड़ी। वस्तुतः तुर्कों से अपनी कन्याओं को बचाने के लिए बाल विवाह परम्परा का उदय हुआ। समाज को यह विश्वास था कि कन्या की मांग में सिन्दूर देखकर सम्भवतः आततायी तुर्क उसे छोड़ देंगे। लेकिन पाशविक प्रवृत्ति के मुस्लिमों ने ऐसे अत्याचार किये कि उनके स्मरण मात्र से ही आश्चर्य होगा। उनके अत्याचार से भारत में सती प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर रोक, बाल विवाह राजस्थान के राजपूतों में मुस्लिमों की जौहर प्रथा हिन्दू क्षत्रिय शासकों की बहुविवाह प्रथा मंदिरों में महिलाओं की यौन शोषण की देवदासी प्रथा इत्यादि कुरीतियों ने इस प्रकार जन्म लिया कि भारतीय समाज में मजबूत पैठ बना ली। महिलाओं को शोषण अत्याचार जैसी कुरीतियों से आजादी दिलाने के लिए तथा सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक, प्रत्येक क्षेत्र में समानता का अधिकार प्रदान करने के उद्देश्य से जिस आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ वह नारीवाद के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सर्वप्रथम 'नारीवाद' का प्रयोग '1837' में एक काल्पनिक समाजवादी फ्रांसीसी दार्शनिक ''चार्ल्स फूरियर'' को दिया जाता है।[2]

भारत में नारीवाद के इतिहास को तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है।

पहला चरण – 1850 से 1915 तक
दूसरा चरण – 1915 से 1947
तीसरा चरण– 1947 से आज तक

भारत में नारीवाद प्रथम चरण– 1850 से 1915

इस चरण में महिला की स्थिति भारतीय समाज में अच्छी नहीं थी। सती प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह जैसी कुरीतियां समाज को खोखला कर रहीं थी। परम्पराओं और धर्म के नाम पर महिलाओं का निरन्तर शोषण हो रहा था। भारत में प्रथम नारीवादी लहर पुरूष सुधारवादी विचारकों द्वारा महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन सम्बन्धी चेतना से आरम्भ होती है।[3] इसमें उल्लेखनीय नाम दयानन्द सरस्वती, राजाराम मोहन राय, स्वामी दयानन्द, सैयद अहमद खान इत्यादि हैं। प्रथम चरण में समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने का भरसक प्रयास किया गया।

भारत में द्वितीय नारीवादी चरण–1915 से 1947 तक–

भारत में नारीवाद का द्वितीय चरण प्रथम चरण के स्तम्भ पर खड़ा हुआ। महिला सुधार निरन्तर अग्रसर हुआ। भारतीय महिलायें जागृत हुईं और राष्ट्रवाद जैसी स्वतन्त्रता आन्दोलन का हिस्सा बनीं। राजकुमारी अमृत कौर, सुचेता कृपलानी, सरला देवी चौधरानी मृथुलक्ष्मी रेड्डी इत्यादि महिलाओं ने अपना महत्वपूर्ण योगदान भारत के स्वतंत्रता संग्राम में देकर राजनीतिक क्षेत्र में इतिहास रचा।[4] यह चरण महिलाओं की स्थिति के सांस्कृतिक पुनरूत्थान का सूचक है।

भारत में तृतीय नारीवादी चरण 1947 से आज तकः–

1947 तक आते–आते तृतीय चरण के प्रवेश में महिला सुधार की दिशा में अनेक सकारात्मक प्रयास किये गये, जिसके उपरान्त महिलाओं की स्थिति में अभूतपूर्व बदलाव परिलक्षित हुये। नारी को आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सभी अधिकार देने की पूर्ण वकालत की गयी। 'अरूणा आसफ अली' 1958 में दिल्ली नगर निगम की प्रथम महापौर चुनी गई। तृतीय चरण नारीवादी आंदोलन की उस व्यापकता को प्राप्त हुआ, जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर महिलाओं के द्वारा भारतीय संस्कृति को गौरवान्वित किया जा रहा है।[5] महिलाओं की समस्याओं की ओर मात्र राष्ट्र का ध्यान केन्द्रित नहीं किया, अपितु पूरे विश्व का ध्यान केन्द्रित करने में भारतीय महिलाओं का योगदान है।

आधुनिक काल में एक बड़ा बौद्धिक वर्ग जिसमें 'स्त्री और पुरूष' दोनों सम्मिलित हैं, नारीवादी आंदोलन का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। पुरूष वर्ग में चिंतक ऐसे हैं, जो भारतीय संस्कृति को निखारना चाहते हैं। रची बसी बाहरी संस्कृति को हंस के समान अलग करने की दिशा में प्रयासरत हैं। विभिन्न महिला नारीवादी कार्यकर्ता नारीवाद की समस्या को पूरे विश्व पटल पर प्रस्तुत कर रही है। सर्वत्र जागरूकता व्याप्त होने के उपरान्त भी समस्या रूपी अंधकार छाया है। आज भूमण्डलीकरण के युग में समस्त विश्व एक गांव की परिकल्पना में आ गया है। नए–नए आविष्कारों से सामजिक, आर्थिक क्षेत्र में कई आयाम आये महिलाओं की भागीदारी निरंतर बढ़ रही है, कोई भी क्षेत्र उनसे अछूता नहीं है। निसंदेह उनकी स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन हुआ। परन्तु ये परिवर्तन समान रूप से नहीं देखा जा सकता। आज भी महिला उत्पीड़न का शिकार है,। कन्या भ्रूण हत्या, ब्रेस्ट आयरिंग, पर्दा प्रथा, देह व्यापार, अपहरण, आनर किलिंग दहेज प्रथा, धोखे से विवाह करके कार्ल गर्ल का धंधा करवाना, पति के द्वारा मारना पीटना यहां तक हत्या करना आदि समस्याओं से महिला त्रस्त हैं।[6] ये कुरीतियाँ जो भारतीय संस्कृति का कभी अंग नहीं थी, आज जगह जगह व्याप्त हैं। इन्हें दूर करने के लिये बौद्धिक जागरूकता के साथ महिलाओं को सामना करना होगा। उन्हें पुरूष को प्रतिद्वंदी नहीं अपितु सहभागी बनकर कार्य करना होगा। बड़ा पुरूष वर्ग महिलाओं की भारतीय संस्कृति को न स्वीकार करके प्रतिद्वंदी स्वरूप का साक्षात्कार करता है। इस चुनौती से लड़ने के लिये महिला को धैर्य अनुशासन, मर्यादा आदि के शस्त्रों का प्रयोग करना होगा, भटकाव की स्थिति को एक बड़े वर्ग की महिला जो समाज में प्रतिष्ठित है, विभिन्न पदों पर आसीन है, सही दिशा दिखानी होगी। अपने

अन्याय के बदले की भावना को छोड़कर सुधारात्मक नजरिये के प्रयोग को अपनाना होगा। ये शिक्षा हमारा संस्कृत विषय देता है, जहां सदैव सद्भावना का निवास है। हमारी प्राचीन संस्कृति ऐसी ही थी।

वर्तमान में नारीवाद दो दिशाओं का अनुसरण कर रहा हैः नारीवाद में एक तरफ वे कार्यकर्त्ता हैं, जो नारी की समस्याओं को उजागर करके, 'स्त्री पुरूष प्रतिद्वंदी नहीं है' समझकर सहभागी के रूप में समाधान प्रस्तुत कर रहे हैं। वे भारतीय संस्कृति को जीवित करने का प्रयास कर रहे हैं। नारीवाद की यह विचारधारा सभी मुद्दे महिला और पुरूष को एक गाड़ी के दो पहिए मानकर सुलझाना चाहती हैं.....वहीं दूसरी विचारधारा में पुरूष और महिला एक दूसरे के सामने प्रतिद्वंदी बन कर खड़े हैं। पेशेवर नारीवादी महिलाओं का एक बहुत बड़ा वर्ग है जो नारी की समस्याओं को भौड़े ढंग से उजागर करता है तथा समाज में उनके हक की लड़ाई लड़ता है। ''इस नवीन महिला वर्ग में खासकर युवा महिलाओं का एक ऐसा उपभोक्तावादी वर्ग उत्पन्न हुआ है, जो स्वतंत्रता और अधिकारों को परंपरा से अलग समाज के बजाए अपनी शर्तों पर देखता है। किसी भी गतिविधि में स्वछंदतापूर्वक शामिल होना, पब आना, रात में बाहर घूमने की आजादी, सहजीवन फ्री सेक्स को अपने स्वैच्छिक अधिकार के रूप में देखता है।[7] इन मांगों से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह प्राचीन संस्कृति की ओर लौटो का उद्घोष नहीं अपितु रेडिकल विचाराधारा है। इस वर्ग की अलग जीवन शैली है, जो भूमण्डलीकरण से पहले सामान्य नहीं थी। सोशल मीडिया के माध्यम से चला पिंक चड्डी अभियान, नई दिल्ली में आयोजित स्लट वाक, जैसे दुस्साहिस अभियान इसी वर्ग की देन है।

नारीवाद का उद्देश्य पुरूष और स्त्री के बीच खाईं बनाना नहीं अपितु दोनों एक दूसरे के पूरक है, इस भावना का विकास करना है।[8] हमारी भारतीय संस्कृति भ्रमित नारीवाद की दिशा की ओर जाना नहीं अपितु सकारात्मक दिशा की ओर सुधारात्मक कदम बढ़ाना है।

संसार का कोई ऐसा राष्ट्र या समाज नहीं जहाँ संघर्ष न हो फिर भी भारतीय समाज में आज भी सांसारिक सुखों की जड़ में नारियाँ ही विद्यमान है। हमारे भारतीय घरों में जिस तरह संबंधों की प्रतिष्ठा है उसे देखकर पाश्चात्यों को आश्चर्य होता है।हमारा कर्त्तव्य प्राचीन संस्कृति की गरिमा को बचाना है, न कि समाज में पुरूष और स्त्री के अस्तित्व को छिन्न–भिन्न करके नारी को अपमानित करने में।

संदर्भ

1. Altekar, A.S. 1962, The Position of Woman in Hindu Civilization, Matial Banarsidas, Delhi.
2. परमार, शुभ्रा, नारीवादी सिद्धांत और व्यवहार, ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली, 2015 पृष्ठ 61
3. वही, पृष्ठ 90
4. वही, पृष्ठ 95
5. वही पृष्ठ 109
6. वहीं पृष्ठ 247
7. वहीं पृष्ठ 138
8. कु0 शिवा, दस्तावेज, गोरखपुर 2008, पृष्ठ 45